दिसंबर १९९१ हिंदी पत्रिका में प्रकाशित

धम्मवाणी

असेवना च बालानं, पण्डितानञ्च सेवना।
पूजा च पूजनीयानं, एतं मङ्गलमुत्तमं॥

मूर्खों की संगति न करना, बुद्धिमानों की संगति करना और पूज्यों की पूजा करना – यह उत्तम मंगल है।

– श्रामणेर-विनय ३-२.

ऐसे थे गुरुदेव

कमल से कोमलः कुलिश कठोर

मैत्री और करुणा से ओत-प्रोत रहनेवाले संत पुरुष का हृदय कमल की पांखुड़ी सदृश कोमल होता है। परन्तु कर्तव्यपरायणता के क्षेत्र में जहां आवश्यक हो, वहां कुलिश यानि बज्र सदृश कठोर बन जाता है। सयाजी के जीवन में ये दोनों गुण बार-बार प्रकट होते रहते थे। अनेक प्रसंग हैं, जिनमें दो-चार का उल्लेख करना पर्याप्त होगा।

४ जनवरी, १९४२ को ब्रह्मदेश आजाद हुआ। परन्तु आजाद सरकार को प्रारंभ से ही अनेक बहुरंगी बागियों से मुठभेड़ लेनी पड़ी। भिन्न-भिन्न मत-मतान्तरों वाले बागियों के समूह के समूह देश के भिन्न-भिन्न भागों में सरकार के विरुद्ध उठ खड़े हुए। उनके पास हथियारों की कमी नहीं थी। द्वितीय महायुद्ध के समय जापानियों ने और उन्हीं की तरह मित्र राष्ट्रों ने भी युद्ध में बर्मी युवकों को अपनी ओर खींचने के लिए खुले हाथों हथियार बांटे। अब देश में सुव्यवस्थित शासन लागू करने में यही बाधक सिद्ध हुए। बागियों के इतने मोर्चे खुले कि नवनिर्मित सरकारी सेना के लिये उनका सामना करना कठिन हो गया। धीरे-धीरे चारों ओर बागियों का दबदबा छा गया। सब जगह उन्हीं का बोल-बाला। समाजवाद, साम्यवाद, जातिवाद, क्षेत्रवाद के नारे लगाने वाले भिन्न-भिन्न बागी भिन्न-भिन्न स्थानों को अपने-अपने कब्जे में किये बैठे थे। एक समय ऐसा आया कि बर्मा की संघीय सरकार के वल रंगून नगर की सरकार बन कर रह गई। बागियों का एक दल रंगून का भी दरवाजा खटखटाने लगा। शहर से १०-१२ मील दूर तक उनका आधिपत्य हो गया। संघीय सरकार का अस्तित्व खतरे में पड़ गया। सारे देश में अराजकता फैली हुई थी। रंगून की सरकार भी गिर जाय तो देश की संघीय सत्ता उखड़ जाय। सारा देश टुकड़ों में बँट जाय। सरकार चिन्तित, सेना चिन्तित, पर करे क्या? बचाव की कोई आशा नहीं दीख रही थी।

पूज्य गुरुदेव देश में सुख-शांति और समृद्धि चाहते थे। पर वे भी क्या करते? उनका बल तो धर्म-बल ही था। कभी प्रधानमंत्री के घर जा कर मंगल मैत्री देते। कभी अपने निवास स्थान से ही देश की सुरक्षा की मंगल कामना करते।

एक ओर उनके हृदय में कमल की सी कोमलता तथा दूसरी ओर एक घटना को लेकर हृदय वज्रवत कठोर हो गया। हुआ यों कि इस आपातकाल में सरकार ने अपने पड़ोसी देश से मदद मांगी। पड़ोसी देश मित्र था। संकट में साथ देने को राजी हुआ। पर जो सामग्री उसने देनी स्वीकारी, वह हवाई जहाजों द्वारा ही लाई जा सकती थी। सरकार के पास उपयुक्त विमान-सेवा का साधन नहीं था। यह भी बाहर से ही उपलब्ध करना था। इस योजना को सफलीभूत करने के लिए सरकार ने जो फैसला जल्दबाजी में किया, वह देश के कानून के चौखटे में फिट नहीं बैठता था।

सयाजी ऊ बा खिन एकाउन्टेन्ट जनरल थे। उन्होंने इस निर्णय को अवैध करार किया। सरकार असमंजस में पड़ी। प्रधान मंत्री जानता था कि सयाजी सिद्धान्तों के धनी हैं। इस मामले में समझौता करनेवाले नहीं हैं। वे हमेशा दृढ़तापूर्वक यही कहा करते थे कि मुझे वेतन इसी बात की मिलती है कि मैं राज्य-कोष का एक पैसा भी नियम विरुद्ध खर्च न होने दूं।

प्रधानमंत्री के मन में सयाजी की इस कर्तव्यनिष्ठा के प्रति बेहद सम्मान था, परन्तु स्थिति बड़ी नाजुक थी। अतः सयाजी को सलाह-मशविरा के लिए बुलाया गया और उनसे निवेदन किया गया कि आवश्यक सामग्री तो लानी ही होगी। इस पर खर्च किया जाना आवश्यक है। अब आप ही बताइये कि इसे कैसे नियमों के चौखटे में फिट किया जाय? सयाजी ने रास्ता बताया और उसे अपनाकर सरकार सही उद्देश्य को गलत तरीके से पूरा करने के दोष से बची।

ऐसा ही एक अन्य प्रसंग :–

धीरे-धीरे राष्ट्रीय सेना ने बागियों का खात्मा किया। केवल सुदूरवर्ती पहाड़ी प्रदेशों को छोड़कर लगभग सारे देश के बागी कुचल दिये गए। अब सरकार समाज-कल्याण की विभिन्न योजनाओं में अधिक ध्यान देने लगी। भिक्षु-संघ की कृपा से देश में साक्षरता की समस्या नहीं थी। थोड़े-से गिरिजनों को छोड़कर बाकी सारा देश साक्षर था। पर ऊंची शिक्षा का अभाव था। इसे पूरा करने के शुभ उद्देश्य से प्रधान मंत्री ने एक बृहद् सार्वजनीन सभा में गांव-गांव में वयस्क-शिक्षा आरम्भ करने की घोषणा की और साथ ही इस कार्य के लिये संबंधित मंत्रालय को तत्काल एक मोटी रकम देने का ऐलान किया।

इस योजना के प्रति सयाजी की पूरी सहानुभूति थी। परन्तु यह मोटी रकम बजट के किसी सेक्शन में भी फिट नहीं बैठती थी। अतः उन्होंने विरोध किया। प्रधानमंत्री की स्थिति बड़ी नाजुक हुई, परन्तु ऊ बा खिन का विरोध नियमानुकूल था। अतः उसे स्वीकारा। लेकिन जो घोषणा की जा चुकी थी, उसे तो पूरा करना ही था। अतः प्रधानमंत्री ने एक और रास्ता ढूंढ़ निकाला। रंगून रेस-कोर्स क्लब के प्रमुख अधिकारियों को बुलवाया और इस योजना को सफलीभूत करने के लिये उनका सहयोग मांगा। एक दिन स्पेशल घुड़दौड़ का आयोजन किया जाय, जिसकी प्रवेश-फीस ऊंची रखी जाय। उससे जो मोटी आमदनी हो, वह इस शुभ कार्य के लिये दान में दी जाय। प्रधान मंत्री की बात भला कौन टालता। ऐसा ही हुआ। रेस-क्लब को उस दिन मोटी आमदनी हुई। एक विशाल सार्वजनीन

सभा में उस रकम का चेक रेस-क्लबवालों ने प्रधानमंत्री को और प्रधानमंत्री ने सम्बंधित मंत्री को बड़ी धूमधाम से भेंट किया।

आयोजन के बाद जब केससयाजी के पास आया तो उन्होंने फिर रोक लगाई। प्रधान मंत्री हैरान था। उसकी प्रतिष्ठा का सवाल था। ऊ बा खिन अब क्यों चेक का भुगतान रोक रहा है? यह तो सरकारी पैसा नहीं है। इसे रोकने का क्या अधिकार है उसे? पर ऊ बा खिन ने नोट लिख कर चढ़ाया कि रेस-कोर्स की आय से सरकारी टैक्स की रकम काट कर जो बचे, उसका भुगतान किया जा सकता है। प्रधान मंत्री लाजबाब था। उसने मुस्कुरा कर स्वीकार किया और ऐसा ही हुआ।

प्रधान मंत्री की तो बात ही क्या? किसी भी कैबिनेट मिनिस्टर के निर्णय के खिलाफ इस निर्भयतापूर्वक आवाज उठाना ऊ खा खिन जैसे बिरले आफिसर के ही बूते की बात थी।

***

ऊ बा खिन शासन-सेवा की जिम्मेदारी निभाने में जितने निर्भीक थे, उतने ही निष्पक्ष भी। इस प्रसंग में भी अनेक घटनाएं हैं।

उनमें से एक:–

उनके दफ्तर में एक कनिष्ठ अधिकारी था, जो कि उनका प्रिय शिष्य भी था। वह बहुत विनम्र और सेवाभावी व्यक्ति था। गुरुजी की सेवा में सदा तत्पर रहनेवाला। गुरुजी को भी उसके प्रति बहुत वात्सल्यभाव था। परन्तु यह वात्सल्यभाव कर्तव्यपरायणता में बन्धन न बन सका। हुआ यूं कि साल के अन्त में अधिकारियों के प्रोमोशन का समय आया। प्रोमोशन की लिस्ट में इस व्यक्ति का नाम सबसे ऊपर था, क्योंकि सेवा-वर्षों की गणना में वह औरों से वरिष्ठ था और इस कारण प्रोमोशन का सही हकदार था। गुरुदेव चाहते तो उसके प्रोमोशन की सिफारिश आसानी से कर सकते थे। पर उन्होंने ऐसा नहीं किया। प्रोमोशन के लिये केवल वरिष्ठता ही नहीं देखी जाय, योग्यता और कार्यदक्षता भी देखी जाय, जिसकी उसमें कमी थी। गुरुजी ने उसे बुलाकर प्यार से समझाया कि वह लेखा सम्बन्धी अमुक परीक्षा और पास करले तो प्रोमोशन मिल जायेगा। शिष्य ने गुरु की बात स्वीकार की। इसे पूरा करने में उसे दो वर्ष लग गये। तभी उसे प्रोमोशन मिल सका।

निर्भयता की भांति निष्पक्षता भी उनका विशिष्ट गुण था।

बिरले ही होते हैं ऐसे निर्भीक और निष्पक्ष, निस्पृह और निरासक्त वात्सल्य के धनी। कमलदल से कोमल परन्तु कुलिश से कठोर। मेरा सौभाग्य कि ऐसे अनासक्त गुरुदेव के चरणों में बैठ कर मुझे धर्म सीखने का अवसर मिला। उनके गुणों की याद में उन्हें शत्-शत् प्रणाम!

धर्मपुत्र

स. ना. गो.